International Journal of Information Movement Vol.I Issue XII (April 2017)
Website: www.ijim.in ISSN: 2456-0553 (online) Pages 80-84

परम्पराओं के संदर्भ में मूल्यों का संरक्षण एवं स्त्री विमर्श

डॉ. शालू
पीएच.डी. (हिन्दी),
सैक्टर–3, कुरुक्षेत्र (हरियाणा)

सार :

प्रस्तुत शोधपत्र में परम्पराओं के संदर्भ में मूल्यों के संरक्षण एवं स्त्री–विमर्श पर विचार किया गया है। प्राचीन साहित्य का अध्ययन करें तो यह सरलता से स्पष्ट हो जाता है कि साहित्य में अभिव्यक्त रूढ़ियों और परम्पराओं में तत्कालीन जीवन और समाज में नारी की स्थिति की जानकारी मिलती है। ज्ञात होता है कि नारी के संदर्भ में साहित्य में अभिव्यक्त परम्पराओं में नारी के प्रति समाज में आदरभाव था, यद्यपि उसका समाज में वह स्थान नहीं था, जो पुरुष को प्राप्त था। अघोषित रूप में यह निश्चित था कि नारी घर का कामकाज देखती थी। गृह–स्वामिनी होती थी और बाहर के कार्य पुरुष करता था। पुरुष के जिम्मे घर–गृहस्थी की बाह्य जिम्मेदारियां थी, तो नारी के हिस्से में घर की मर्यादा और सम्मान आदि को जीवित रखने का कार्य था।

विशेष शब्द : नृशंस, दुहाई, पुरुषोचित्त, बहुतांश, संरचनात्मक

भारतीय भूमि देवभूमि है और जहा तक संस्कृति का प्रश्न है, तो ऐसा माना जाता है कि सभी देवी देवता भारत में ही उत्पन्न हुए है, और भारतीय संस्कृति को सम्पूर्ण विश्व में सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है, क्योंकि भारतीय संस्कृति ही है, जिसे सम्पूर्ण विश्व मार्गदर्शक के रुप में मानता है, क्योंकि समय–समय पर और प्रत्येक स्तर भारतीय संस्कृति के अपने स्वयं के सही सार्थक और मार्गदर्शक मायने है, जिससे समाज की सुरक्षा के साथ विशुद्ध प्रगति की ओर बढ़ा जा सकता है, और आज भारतीय संस्कृति का जो ह्रास हो रहा है, वहपाश्चात्य सोच या भारतीय संस्कृति से दूर होने के कारण है। भारतीय संस्कृति में जो सोलह संस्कार बताए गए हैं, वह व्यक्ति के जन्म के पूर्व से बनाकर मृत्यु तक के समय के हैं। भारतीय संस्कृति ही है जो यह बताती है कि जो जीवन जी रहे हैं, वह पूर्व जन्मों के कर्मों से प्रभावित है तथा इस जन्म के कर्म ही हैं, जो अगले जन्म में जीव के सुख–दुख को निर्धारित करेगा अर्थात् हमारी संस्कृति यह भी बताती है की यदि हम संस्कार से हटकर कार्य करते हैं, तो नर्क में जाने का भी डर बताती है और इस डर की वजह से मनुष्य समाजिक जीवन में या अपनें कार्य क्षेत्र में बुरे कार्यों को करने से डरता है, किन्तु वर्तमान समय में इन संस्कारों के ह्रास के कारण हमारा भारतीय

समाज बुराइयों में लिप्त होकर पतन की और अग्रसर है, इसलिए हमें अपने संस्कारों को बचाने के लिए प्रयास करना होगा।

वर्तमान समाज यथार्थ के गहरे धरातल से जूझ रहा है, मनुष्य की अस्मिता आज संकट के साथ व्यापक स्तर पर मूल्य संकट से जूझ रही है। वर्तमान समय में बडी उहापोह है, जैसे परिवेशगत जागरुकता, यथार्थ की नई खोज, विद्रोही प्रवृत्ति, मूल्यगत संघर्ष, स्त्री–पुरुष समभाव, आधुनिकता की दौड़, भौतिक सुख समृद्धि, अतिशय जागरुकता, कुछ अविरल परम्पंराए, इतिहास और प्रवृत्तियों की अहम भूमिका।

आज समाज में स्त्री चेतना में तेजी से बदलाव आया है। यह केवल आज का परिणाम नही है, बल्कि सदियों का प्रयास है, सदियों से ठगी जा रही स्त्री और छली जा रही स्त्री की जागरुकता का ही परिणाम है। स्त्री चेतना में शिक्षा के प्रसार, समाज सुधार आंदोलनों, संवैधानिक अधिकारों, पाश्चात्य प्रभाव नारी मुक्ति आंदोलनों आदि की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इसका मुख्य कारण यह है कि नारी चेतना का बदलाव हुआ स्वरुप परिस्थितियों के कारण हुआ है। स्त्री प्रतिभा सम्पन्न है, या यू कह सकते है के कि कुछ चीजें स्त्री को God gift है। उदाहरण के लिए हम देखते है कि नारी वास्सलय, स्नेह, दया, करुणा, त्याग, कोमलता सेवाभाव आदि की प्रतिमूर्ति है, लेकिन दूसरी तरफ स्त्री सदियों से शोषित हो रही है और सिर्फ किसी भी पुरुष के उपयोग का साधन मात्र है। पुरुष समाज ने प्रत्येक क्षेत्र में स्त्री को वस्तु मानकर उसका उपयोग किया और हर युग में वह यह कहता आया है कि स्त्री तो प्रकृति की अद्‌भुत रचना है, और उस रचना का उपयोग करने का अधिकार पति को ही तो प्राप्त है। आज का समय इतना घृणित हो गया है कि स्त्री कहीं भी सुरक्षित नही है, मूल्यों के ह्रास का यह युग है। आज से पहले स्त्री अपने भाई तथा पिता के पास स्वयं को सुरक्षित महसूस करती थी, परन्तु हम आए दिन यह समाचार देखते है कि पिता ने उस प्रकृति की अमूल्य धरोहर का उपयोग कर लिया या पिता और पुत्र ने मिलकर बहिन–बेटी खूब मिलजुल कर निचोड़ा। जब से मनुष्य ने सम्यता का पाठ पढ़ा है, तब से लेकर आज तक तो यही परंपरा है कि बेटी के लिए सबसे सुरक्षित स्थान उसका अपना घर है, परन्तु आधुनिकता की इस अंधी दौड़ ने मनुष्य को ऐसा कुत्सित किया कि उसके अपने ही मूल्य गिरकर रह गए हैं।

स्त्री का प्रकार हर युग में बदलता रहा है। वैदिक युग मे वह सम्मान की वस्तु थी, तो मध्य युग मे वह विलासिता की वस्तु मानी गयी तथा सब प्रकार के अधिकारों से वंचित रही तथा बीसवी शताब्दी के अंतिम तीन दशकों में स्त्री स्वतत्रंता संबंधी विचारों के कारण, शिक्षा के कारण, कुछेक आंदोलनों के कारण नारी मे आत्मबल पैदा हुआ आज वह अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करती हुई दिख रही है। ऐसा प्रतीत होता था कि अब वह 'वस्तु' से वास्तविकता की ओर बढ़ रही है, कि अब वह सचमुच मे ही मनुष्य है, ऐसा उसे पूर्ण विश्वास हो गया था कि फिर अचानक कुछ ऐसी घटना दिल्ली का नृशंस बलात्कार कांड एवम अन्य बलात्कार की घटनाएं हुई कि अब स्त्री को लग रहा है कि अब सिर्फ परंपरा और

मूल्यों की दुहाई देने से काम नही चलने वाला है। अब यदि परंपरागत मूल्यों को पुर्नस्थापित करना है, तो पुरुषों को समझना और संभलना होगा, वरना् स्त्री को 'काली' का रुप धारण करने का समय अब दूर नहीं।

आज के परिवेश में हम देखते हैं कि अधिंकाशतः नारी शिक्षित और जागरुक है, वह जीवन के सभी संदर्भों में सहज है और जटिल से जटिल समस्याओं को वह अपने स्तर से हल करने में सक्षम है। युगों से पुरुषों के अधिकार तले दबे रहनेे वाली, स्वतंत्र व्यक्तित्व की स्त्री ने परम्परागत मूल्यों को चुनौती दी है, आज स्त्री अपनी चेतना के बल पर राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में आगे बढ़ती जा रही है। यही कारण है कि नारी आज अपने पैरों पर खड़ी है।

हमारे भारतीय समाज में पुरुष सत्तात्मक समाज की व्यवस्था के कारण स्त्री को दो ही स्थान प्राप्त है। एक तो स्त्री का 'देवी' स्थान निर्धारित, सुनियोजित है, दूसरा उसे 'योग्य' बना दिया गया है। भारतीय इतिहास की लम्बी विकास यात्रा में स्त्री सम्मान, शोषण अधिकार विहीन एवं समातना के लिए संघर्ष करती रही है। यहा मैं एक कहानी के माध्यम से स्त्री के प्रति पुरुष के एक ऐसे परम्परागत अत्याचार का उल्लेख करुंगी कि पुरुषोचित्त मानसिकता कैसे अपने काम आत्मिक संवेदना से निकालती है और पुरुष किस तरह ताने बाने बुनता है कि एक ही समय में दो नावों के बराबरी से सवारी कर सके। फिर भी स्त्री की ऐसी संवेदना की शायद वह प्रेम के लायक कभी नही थी और परिणति संवेदनात्मक समर्पण भाव – '' अमेरिका में रफतभाई किसी मेम के साथ रह रहे है, इस बात को जानकर रफतभाई की नजर में हमरुख का क्या महत्व है। उसे समझ में आ गया है।[1] इस बात को जानकर वह सोचती है– ''वह रफनभाई के दिल और दिमाग में कभी नही थी, वह रिश्ते के नाम पर पोस्टर थी, एक नारी थी, जिसे रफतभाई समाज की दीवार पर चिपका कर अपनी पहचान कर झण्डा उॅचा रखना चाहते थे, वरना वह महरुख का एक किसी दूसरी औरत को क्यों दे बैठते। उसके दिल में बगावत के तूफान उठने लगते हैं। गम के बादल छंट गए थे। अब वहाँ नफरत और हिकारत का आसमान फैला हुआ था जो महरुख को बताता था कि सब ने उसे छला है, कभी प्यार के नाम पर, कभी रिश्तेदारी के नाम पर।''[2]

यह सब पुरुषोचित्त रचना है, जो कभी भी एक स्त्री से पूरी नही होती। महरुख जैसी कितनी ही स्त्रिया जो यह रचना धर्मिता को भली–भॉति समझकर भी सिर्फ इसलिए उस परिवार में रहती है कि वह एक मा और बेटी है, उसके सिर्फ एक कदम उठाने मात्र से परिवार बिखर जाएगा और इस तरह की गहरी संवेदना वह अपने भीतर लेकर एक दिन समाप्त हो जाती है।

आज के इस मंचीय युग में हमने बहुतांश पुरुष समाज को यह बोलते सुना है कि –''नर से भारी है नारी पुरुष कल भी आभारी था और आज भी आभारी है।'' उक्त पंक्तियों में पुरुष का अपना कुछ पारम्परिक दृष्टिकोण बदलता हुआ सा नजर आता है या वह स्त्री लिए एक व्यंग्य है। यह बात तो तय पुरुष का

व्यक्तिगत अहं, उसकी मानवीयता उसके द्वारा स्त्री के मानसिक और शारीरिक शोषण आदि तय करेंगे। वर्तमान समय में यदि हम परम्परागत नैतिक मूल्यो की बात करें तो आज की स्त्री पुरुष के सम्मुख आत्मसमर्पण करती हुई, रोती, कलपती, पीड़ित स्त्री नही है, वह अपने वजूद का दूसरों को एहसास करा देनी वाली, अपने शरीर की रक्षा करने के लिए कृतसंकल्प स्त्री है।[3] कृष्णा सोबती के उपन्यास 'सूरजमुखी अंधेरे में' की मुख्य पात्र 'स्त्री', जिसके साथ बलात्कार (जब वह 5 से 11 साल के बीच रही होगी) हो जाता है। बलात्कार की इस घटना के बाद सभी स्कूल के बच्चे 'स्त्री' को अच्छी लड़की नहीं समझते या 'बुरी लड़की' एवं 'गंदी लड़की' कहकर चिढ़ाते हैं और इसके बारे में तरह–तरह की झूठी अपवाह फैलाते हैं। स्त्री को गुस्सा आता है और वह किसी न किसी की जमकर पिटाई कर देती है। अज्जू कहता है –''किसी ने बुरा काम किया था ना तुम्हारे साथ। खून निकला था ना।''[4] और स्त्री फटाक से सूरजमुखी का ढेर अज्जू के मुंह पर मारती है। अज्जू रोते हुए कहता है। ''मैं ही अकेले थोड़े कहता हूँ। सब लड़के–लड़किया .....''[5] इस पर स्त्री ने घूसों से पीटा ..... इधर–उधर फिर जमीन पर पटक दिया और कहा ''मिस डेविड से कहकर 'पनिश' करवांऊंगी। अज्जू गिड़गिड़ाने लगता है –'मुझे क्यौं मारती हो स्त्री ..... डॉक्टर अंकल की लड़की डिंपी सबसे कहती फिरती है। इसके के बाद 'स्त्री' भागती गई और रोती गई उसके दिल दिमाग में घूमने लगता है वह हवा घर ..... वह भद्दा चेहरा – वह नीचे पटकता हाथ।''[6] इस पूरे समाजिक ढांचे को एक साथ तोड़ा नहीं जा सकता, पर इसमें परिवर्तन किए जा सकते हैं।

निष्कर्ष :

परंपराओं के संदर्भ में मूल्यों के संरक्षण और स्त्री–विमर्श के उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि नारी की स्थिति प्राचीन काल में अपने स्वर्ण युग में रही है। इसके पश्चात् निरंतर स्त्रियाँ हाशिए पर आती चली गई। अपनी मानवीय गरिमा और अधिकार को समझकर संरचनात्मक सांस्कृतिक तथा मानवीय दृष्टिकोण के मूल तत्वों का विश्लेषण कर स्त्रियों को शक्ति संपन्न बनाने की आवश्यकता है। अभी हमारी दृष्टि महानगर की स्त्रियों तक ही सीमित है, जितने भी विश्लेषण और आकलन स्त्री–विमर्श और सशक्तिकरण की दृष्टि से किए जा रहे हैं, वे उस पूरी स्त्री की व्यथा–कथा को समेटने में अपर्याप्त हैं। समाज में आधी आबादी स्त्रियों की है, इसलिए महानगरों और मेट्रो शहरों के स्थान पर गावों को सशक्तिकरण के कार्यक्रिमों और योजनाओं में सम्मिलित करने की आवश्यकता है, तभी सही मायने में स्त्रियों को सशक्त किया जा सकता है। राजनीति में भी उन्हें आरक्षण के आधार पर ईमानदारी से स्थान देने की जरूरत है।

संदर्भ :

1. नासिरा शर्मा, ठीकरे की मंगनी, पृ. 32
2. वही, 33
3. वही, पृ.36
4. कृष्णा सोबती के उपन्यास 'सूरजमुखी अंधेरे में', पृ. 70
5. वही, पृ. 72
6. वही,